श्री गुरू ग्रंथ साहिब की सम्पादन कला में राग निर्धारण

डॉ. हरजस कौर
सह–आचार्य, राजकीय महाविद्यालय, रूपनगर

गुरमत संगीत में जहां श्री गुरू ग्रंथ साहिब की समूह बाणी का गायन आधार राग है वहां श्री गुरू ग्रंथ साहिब की सम्पादना भी रागों पर आधारित की गई है। इस संबंध में वाणी में अंकित अनेक फुरमान राग के महत्व और गुरमत संगीत में इसके संदर्भ को भली भांति उजागर करते हैं:

धंनु सु राग सुरंगड़े आलापत सभ तिख जाए।[1]
सभना रागा विचि सो भला भाई जितु वसिआ मनि आए।।
रागु नादु सभु सचु है कीमति कही ना जाए।[2]
गुण गोविन्द गावहु सभि हरि जन, राग रतन रसना आलाप।[3]

यदि वाणी के सम्पूर्ण स्वरूप का साधारण दृष्टि से पाठ करें तो हमारे सामने यह तत्व भली भांति स्पष्ट हो जाता है कि सनातनी, लोक और विभिन्न कवि रूपों के आधार पर निर्मित वाणी को वाणी के गायन हेतु विभिन्न राग निर्धारित किये गये हैं। कई बार मन में एक शंका भी उत्पन्न होती है कि सनातनी कावि रूप या शास्त्रीय गायन शैली में राग का निर्धारन तो मानने योग्य है परंतु लोक शैली में किसे राग के अन्तर्गत अंकित करना या इनका राग निर्धारित करना कहां तक उचित है। यह शंका साधारण ज्ञान और दृष्टि की उपज है। गुरवाणी के इन गोरख रहस्य को समझने के लिए इसकी संगीतात्मक और रागात्मक पृष्ठभूमि को जानने के लिये यह भी जरूरी है कि राग प्रबन्ध पर विचार किया जाये और राग प्रबंध पर विचार करने से पूर्व राग की भारतीय संगीत में प्रयोग शक्ति और सामर्थ सम्बन्धी जानना अति आवश्यक प्रतीत होता है।

राग भारतीय संगीत की केन्द्रीय और प्रमुख इकाई है। राग से पूर्व जाति गायन प्रचार में रहा। उपरांत राग का प्रथम स्रोत 7वीं शताब्दी के संगीत ग्रंथकार मतंग मुनि के ग्रंथ 'बृहददेशी' में प्राप्त होता है। वहाँ से लेकर अब तक राग भारतीय संगीत की केन्द्रीय और प्रमुख इकाई है। गायन जो कि भारतीय संगीत की

मूल आधारशिला है की शास्त्रिक पहचान और सौन्दर्यात्मक रूप रेखा राग पर ही आधारित है। इस तरह वादन में भी राग इकाई के रूप में विद्यमान है। भारतीय संगीत की कोई भी ऐसी गायन या वादन शैली नहीं जिसमें राग की झलक न हो। राग को भारतीय संगीत का सुरात्मक छंद या मीटर भी कहा जाता है। विभिन्न रंजक स्वरों को संगीत शास्त्र के अनुसार क्रम प्रधान होने के कारण ही राग की उत्पत्ति होती है। राग के बिना भारतीय संगीत की कल्पना अधूरी है। इसलिये किसी भी संगीत प्रबन्ध या अर्ध संगीत प्रबन्ध पर चर्चा करते समय इसके राग पक्ष सम्बन्धी चर्चा करना बुनियादी तौर पर आवश्यक है।

संगीत और कावि में राग के अर्थ अलग–अलग हैं। कावि के पक्ष में राग को प्रति और अनुराग के अर्थ दिये गये हैं और दर्शन पक्ष में राग विराग।[4] भारतीय संगीत के प्राचीन ग्रंथ 'नाट्य शास्त्र' में इसका उल्लेख साहित्यिक स्तर पर किया गया है।[5]

भारतीय संगीत के इतिहास को अध्ययन करने से पता चलता है कि राग गायन से पूर्व जाति गायन प्रचार में था। लगभग 7वीं शताब्दी में राग गायन अस्तित्व में आया। संगीत के अनुसार सबसे पहले राग शब्द का प्रयोग मतंग मुनि ने अपने ग्रंथ 'ब्रहददेशी' में किया।

स्वरवरण विशेषण ध्वनिभेदेन वा पुनः
रंजयते येनयः कशिचत स रागः संम्मतः सतम।।[6]

अर्थात् वह धुन जो वर्णों के साथ सजाई हो और जिसमें रंजकता हो, राग कहलाती है।

ग्रंथकार पंडित शारंगदेव ने अपने ग्रंथ 'संगीत रत्नाकर' में राग सम्बन्धी लिखा है कि 'स्वर और वर्ण के साथ सजी विशिष्ट धुनी जो रंजकता प्रदान करती है,' उसे राग कहते हैं।

यो सो धवनिविशेषसतु स्वर – वरणु – विभूषितः
रंजको जनचितानां स रागः कथितो बुधे।।[7]

पंडित अहोबल के अनुसार भी रंजक स्वरों का समूह राग कहलाता है।

रंजक : स्वर संदर्भो राग इतिभीधीयते।[8]

भारतीय संगीत में कुछ राग रागिनियां की उत्पत्ति देवी देवताओं से मानी जाती है। शिव ने पांच रागों की उत्पत्ति की और छठा राग पार्वती द्वारा उत्पन्न हुआ। फिर ब्रहमा ने तीस रागिनियां बनाई। शिव जी के पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण और आकाश की ओर मुख्य से भैरव, हिडोल, मेघ, दीपक और श्री राग उच्चारण हुए और पार्वती के मुख्य से कोशिक राग उच्चरित हुआ।[9] भारतीय संगीत में रागों की उत्पत्ति देवी देवताओं से मानी जाती है। पर ऐसे विचार केवल कल्पना के आधार पर प्रगट किए गए हैं जिन के बारे कोई आधार नहीं है।

राग के लक्षणः राग जाति का ही विकसित रूप है। यह जाति के मूल तत्वों पर स्थित है। इनमें समानता होने के कारण जाति के नियम भी राग पर लागू किये जा सकते हैं जो कि बाद में राग के लक्षण नामक प्रचार में आये। रंजकता प्रधान रचना जो जन–चित रंजन करती है, राग कहलाती है। इस पर धुन या मेलाडी और राग एक रूप नज़र आते हैं परंतु विशेष नियमानुसार स्वर और वर्ण के साथ सम्बन्धित विशेष प्रकार की धुनी, जो जन चित रंजन करने के सामर्थ्य हो, राग कहते हैं। इस कारण राग और मेलाडी अपना–अपना स्वतन्त्र पहचान योग्य स्थान ग्रहण करते हैं। राग में मानव मन पर रंग देने की शक्ति जिन तत्वों पर निर्भर करती है, उसके अन्तर्गत स्वरों की पुनरावृत्ति, कण, खटका और काकू भेद जैसी विभिन्न गायन कियाएँ आ जाती हैं, इनके बिना राग के प्रमुख लक्षण जिनके आधार पर राग विशिष्ट पहचान योग्य स्थान ग्रहण करता है : – 1. थाट 2. स्वर 3. आरोह–अवरोह 4. जाति 5. वादी–संवादी–अनुवादी–विवादी 6. मुख्य अंग 7. न्यास 8. पूर्वांग–उत्तरांग 9. समय 10. सम्प्रकृतिक राग आदि।

श्री गुरू ग्रंथ साहिब में प्रयुक्त रागः गुरमत संगीत का स्रोत श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी हैं। श्री गुरू ग्रंथ साहिब में राग दो विधियों से दृष्टिगोचर होते हैं – एक ततकरे के अन्तर्गत और दूसरा साधारण पाठ द्वारा।

श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी के ततकरे के अनुसार 31 राग मिलते हैं जो मुख्य रागों के रूप में अंकित हैं और श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी के साधारण पाठ द्वारा ततकरे के अनुसार 31 मुख्य रागों के अतिरिक्त ओर राग भी प्राप्त होते हैं जो मुख्य रागों के अंतर्गत दर्ज हैं। इसके पहले कि इन के क्रियात्मक स्वरूपों से सम्बन्धित विचार करें, गुरवाणी के मुख्य रागों और उनके अन्तर्गत आये दूसरे रागों संबंधी जान लेना अति आवश्यक है।

राग का नाम	राग के प्रकार	पंना श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी
1 सिरी	.....	14
2 माझ	.....	94
3 गउड़ी	.....	151
	1. गउड़ी गुआरेरी	151
	2. गउड़ी दखणी	152
	3. गउड़ी चेती	154
	4. गउड़ी बैरागणि	156
	5. गउड़ी पूरबी दीपकी	157
	6. गउड़ी पूरबी	242
	7. गउड़ी दीपकी	12
	8. गउड़ी माझ	172
	9. गउड़ी मालवा	214
	10. गउड़ी माला	214
	11. गउड़ी सोरठि	330
4 आसा	.....	347
	12. आसा काफी	365
	13. आसावारी	409
	14. आसावारी सुघंग	369
5 गूजरी	.....	489
6 देवगंधारी	.....	527
	15. देवगंधार	531
7 बिहागड़ा	.....	537
8 वडहंस	.....	557
	16. वडहंस दखणी	580
9 सोरठि	.....	595
10 धनासरी	.....	13/660
11 जैतसरी	.....	696
12 टोडी	.....	711
13 बैराड़ी	.....	719
14 तिलंग	.....	721
	17. तिलंग काफी	726

15 सूही	.....	728
	18. सूही काफी	751
	19. सूही ललित	793
16 बिलावल	.....	794
	20. बिलावल दखणी	843
	21. बिलावल मंगल	844
17 गौंड	.....	859
	22. बिलावल गौंड	874
18 रामकली	.....	876
	23. रामकली दखणी	907
19 नट नारायण	.....	975
	24. नट	975
20 मालीगउड़ा	.....	984
21 मारू	.....	989
	25. मारू काफी	1014
	26. मारू दखणी	1033
22 तुखारी	.....	1107
23 केदारा	.....	1118
24 भैरउ	.....	1125
25 बसंत	.....	1168
	27. बसंत हिंडोल	1171
26 सारंग	.....	1197
27 मलार	.....	1154
28 कानडा	.....	1294
29 कलियाण	.....	1319
	28. कलियाण भोपाल	1321
30 प्रभाती	.....	1327
	29. प्रभाती बिभास	1343
	30. प्रभाती दखणी	1347
	31. बिभास प्रभाती	1352
31 जैजावंती	.....	1352

श्री गुरू ग्रंथ साहिब में मुख्य रागों और उपरागों के अंतर्गत मौसमों और विभिन्न परम्पराओं के साथ सम्बन्धित राग भी मिलते हैं जिनका उल्लेख हम इस प्रकार कर सकते हैं।

शुद्व राग– जो राग स्वतन्त्र तौर पर भिन्न होते हैं, जिनमें किसी ओर राग की छाया दृष्टिगोचर नहीं होती, शुद्व राग हैं। श्री गुरू ग्रंथ साहिब में ततकरे के अंतर्गत दर्ज 31 प्रमुख राग शुद्व राग हैं जैसे : सिरी, माझ, गउड़ी, गूजरी, आसा आदि।

छायालग रागः– जिन रागों की रचना दो रागों की स्वरावलियों के मिश्रण से होती है, छायालग राग हैं। उदाहरण के रूप में गुरवाणी में गउड़ी चेती, गउड़ी पूर्वी, गउड़ी दीपकी छायालग राग हैं।

संकीर्ण रागः– जिन रागों की उत्पति दो या दो से अधिक रागों के मेल से होती है, वह संकीर्ण राग कहलाते हैं। गुरवाणी में राग गउड़ी पूर्वी दीपकी संकीर्ण राग है।

दक्षणी रागः– शुद्व, छायालग, संकीर्ण रागों के अतिरिक्त गुरवाणी में कुछ राग ऐसे भी मिलते हैं जिनके साथ दखणी शब्द का प्रयोग किया गया है। यह राग मुख्य रागों के अधीन अंकित है जैसे गउड़ी दखणी[10] वडहंस दखणी[11], बिलावल दखणी[12], मारू दखणी[13], रामकली दखणी[14], प्रभाती दखणी।[15]

मध्यकाल में भारतीय संगीत विदेशी हमलों के कारण दो पद्वतियों हिन्दुस्तानी या उत्तरी भारतीय संगीत और कर्नाटकी या दक्षणी भारतीय संगीत के अंतर्गत विभाजित हो चुका था। श्री गुरू नानक देव जी ने 'धुर की वाणी' को लोगों तक पहुँचाने के लिए विभिन्न स्थानों का दौरा किया जो चार उदासियों के नाम से जाना जाता हैं। इन उदासियों के अंतर्गत आप दक्षिण भारत भी गये और वहां के सभ्याचार, आचार, व्यवहार, भाषा और संगीत का अध्ययन किया। श्री गुरू नानक देव जी ने दक्षिण भारत के रागों को अपनी वाणी के गायन के लिए प्रयोग किया। श्री गुरू ग्रंथ साहिब में अंकित 'दखणी' शब्द दक्षणी संगीत पद्वति का राग सूचक है पर इन रागों का दक्षिण पद्वति के राग होने के सम्बन्ध में विद्वानों में मत भेद पाये जाते हैं। फरीदकोटी टीका में दक्षणी को राग ना मानते हुए छंद की चाल का नाम दिया गया है।[16] डा. देविन्द्र सिंह विद्यार्थी के अनुसार, 'यदि दखणी शब्द महला 1 आया होता परंतु यह आया महला 1 के संकेत के बाद इस लिए इसको राग का

सूचक समझना उचित नहीं'।[17] पर श्री गुरू ग्रंथ साहिब में अंकित सिरलेख रामकली दखणी महला 1[18] इस बात का संकेत है कि यह दक्षणी पद्वति का राग है।

डा. गुरनाम सिंह ने भी अपने शोध प्रबन्ध में इन रागों को दक्षणी पद्वति का राग स्वीकार किया है।[19] क्रियात्मक तौर पर इन रागों के स्वरूप केवल दक्षणी संगीत पद्वति में ही पाये जाते हैं, उत्तरी भारतीय संगीत में नहीं। इसलिए इन रागों को दक्षणी पद्वति के राग मानना ही उचित है। दक्षणी पद्वति के रागों का प्रयोग श्री गुरू ग्रंथ सहिब में केवल श्री गुरू नानक देव जी ने ही किया है। श्री गुरू ग्रंथ साहिब में सिरलेख के रूप में अंकित 'राग' क्यों जो वाणी को रागों के अंतर्गत गायन करने का निर्देश है, इसलिये गुरमत संगीत परम्परा में उत्तरी और दक्षणी पद्वति दोनों के रागों को समान सतिकार के साथ गाने का आदेश हैं। तेहरवीं शताब्दी में पं. शारंगदेव ने इस दोनों पद्वतियों को मेलने का प्रयत्न किया पर व्यवहारिक तौर पर संभव न हो सका। गुरू साहिबान का दक्षणी पद्वति के रागों को अपनी वाणी के गायन हेतु प्रयोग करके दोनों संगीत पद्वतियों की मध्य की दूरी को खत्म करने में गुरमत संगीत परम्परा का महान योगदान हैं।

सनातनी राग– गुरू साहिबान ने वाणी की सफल प्रस्तुति के लिये वाणी और राग को इन की प्रकृति की अंतरीवी सांझ, रसात्मक और भावात्मक आधार पर जोड़ने की सफल कोशिश की है। गुरू साहिबान ने वाणी के गायन के लिए प्रयोग किये गये सनातनी कावि रूपों के लिए शुद्व रूप में मार्गी या स्थापित रागों का प्रयोग किया है। उदारहण के तौर पर प्रबंध गायन शैली के कावि रूप अष्टपदी का प्रयोग सिरी, माझ, गउड़ी, गूजरी, रामकली, प्रभाती रागों के अन्तर्गत किया गया है।

देशी राग– गुरू साहिबान ने वाणी के संचार की संभावनाओं को बढ़ाने के लिए विभिन्न इलाकों की लोक परम्परा में विकसित रागों को वाणी के गायन हेतु प्रयोग किया है। उदाहरण के तौर पर माझ, आसा काफी, बिहागड़ा तिलंग, सूही, मारू, तुखारी, देशी राग के रूप में श्री गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज हैं।

मौसमी राग– गुरमत संगीत के अंतर्गत उपरोक्त रागों में कुछ राग इस तरह मिलते हैं जो मौसम के साथ सम्बन्धित हैं। इन रागों का गायन भी सम्बन्धित मौसम में हर समय करने की प्रथा है। वाणी का साधारण पाठ करने से ही राग से

सम्बन्धित मौसम का आभास हो जाता है। श्री गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज मौसमी राग बसंत और मल्हार रागों में मौसमों का वर्णन इस प्रकार हैं–

राग बसंत–

पहिल बसंतै आगमनि तिस का करहु बिचारु।।
नानक सो सालाहीअै जि सभसै दे आधारु।।[20]
माहा माह मुमारखी चड़िआ सदा बसंतु।।[21]
करम पेडु साखा हरी धरमु फुल फल गिआनु।।
पत परापति छाव घणी चुका मन अभिमानु।।[22]
रूति आइले सरस बसंत माहि।।[23]
बसंत चड़िआ फूली बनराई।।[24]

राग मल्हार–

करउ बिनउ गुर अपने प्रीतम हरि वरु आणि मिलावै।
सुण घनघोर सीतलु मनु मोरा लाल रती गुन गावै।[25]
चात्रिकु जल बिनु प्रिउ प्रिउ टेरै बिलप करै बिललाई।।
घनहर घोर दसौ दिसि बरसै बिनु जल प्यास न जाई।।[26]
नानक सावणि जे वसै चहु उमाहा होई।
नागां मिरगां मछीआं रसीआं घरि धनु होई।।[27]
उनवि उनवि आयआ वरसै लाई झड़ी।।
नानक भाणै चलै कंत कै सु माणे सदा रली।।[28]
गुरमुखि मलार रागु जो करहि तिन मनु तनु सीतलु होई।।[29]
मलारु सीतल रागु है धिआइअै शांति होई।।[30]

गुरमत संगीत के राग प्रबंध से सम्बन्धित उक्त चर्चा से इस परम्परा के विशाल खजाने का सहिज ही आभास हो जाता है। जैसे कि हम ऊपर विचार कर आए हैं कि भारतीय संगीत में प्रमुख और केन्द्रीय इकाई के रूप में विद्यमान राग को गुरमत संगीत में मौलिक दृष्टिकोण से प्रयोग किया है क्योंकि इस प्रयोग का प्रयोजन कलात्मक नहीं बल्कि अध्यात्मिक है। रबी वाणी के संदेश को सर्व लोकाई तक संचारित करने के लिए जहां सनातनी और लोक कावि का शब्द रूप में प्रयोग किया गया है वहां इस शब्द की प्रस्तुति को हृदय में बसाने अथवा दृढ़ करवाने के

लिए संगीत का माध्यम अपनाया गया है और इस संगीत का मुख्य वाक है जो अपने रंजक गुणों द्वारा श्रोताओं के मन को वशीभूत कर, इसके इर्द गिर्द से तोड़ स्वरात्मक संसार में प्रवेश करवाता है। इस आनंदमय आत्म शुद्धी वाली अवस्था में वाणी का सहज प्रवेश और बोध गुरमत संगीत का प्रयोजन है।

श्री गुरू ग्रंथ साहिब की राग परम्परा से सम्बन्धित अभी तक जो साहित्यकारों या गुरवाणी के व्याख्याकारों ने भी टिप्पणियां की हैं इसलिये इस राग परम्परा का उल्लेख साधारण मात्र ही रहा है। जब कि इस परम्परा का यदि संगीत विज्ञान की दृष्टि से अध्ययन किया जाये तो यह मध्यकालीन राग परम्परा का एक मौलिक और अनूठा उदाहरण है।

गुरू साहिबान ने राग रागणी वर्गीकरण के झमेलों और बिखेड़ों को पूर्ण रूप में समझते हुए अपनी वाणी के राग प्रबन्ध की सृजना के हेतु साधारण और सुखैन विधि अपनाई है जिस में शुद्व, छायालग और संकीर्ण विधि का इस्तेमाल किया गया है। इस विधा के अंतर्गत मुख्य 31 राग और इन 31 रागों के अंतर्गत छायालग और संकीर्ण रागों का ज़िक्र है। इसके बिना विभिन्न मौसमों और विभिन्न इलाकों के साथ सम्बन्धित रागों का प्रयोग भी किया गया है। इस से भिन्न अर्थों और बहु दिशाई प्रयोग का मनोरथ, वाणी को ज्यादा से ज्यादा लोकाई तक संचारित करना है। इसका मनोरथ केवल संचार की दृष्टि से है क्यों जो गुरमत संगीत का राग प्रबन्ध संचार मुख्य है ओर यह संचार का माध्यम भी है।

वर्तमान समय गुरमत संगीत में प्रयुक्त राग के एक से अधिक स्वरूप हमारे पास उपलब्ध हैं, यह हमारी अमीरी है। 18वीं शताब्दी में थाट परिवर्तन होने से भारतीय संगीत में रागों के स्वरूप में परिवर्तन आ गया परन्तु क्यों जो गुरमत संगीत भारतीय संगीत के शास्त्रीय नियमों से निरलेप स्वतन्त्र धारा के रूप में प्रवाहित हो रहा था। इस लिये इसके प्रचारकों में सीना ब सीना पुरातन रूप ही प्रचलित रहे। गुरमत संगीत के इन गायकों में प्रचलित रागों का मुख्य आधार गायन परम्परा है क्योंकि शास्त्र भी क्रियात्मक तत्वों पर ही आधारित होता है और वर्तमान समय गुरमत संगीत की शुद्व परम्परा के बीज इस क्रियात्मक परम्परा में से ही प्राप्त हो सकते हैं। फिर भी इन स्वरूपों को वर्तमान राग सिद्वांत, राग शास्त्र के अनुसार स्वरूपबद्व करके इसके प्रचलन को प्रवाणित और प्रमाणित बनाया जा सकता है।

गुरमत संगीत प्रबन्ध से सम्बन्धित उपरोक्त चर्चा से इस गौरवशाली राग प्रबंध के बारे जितने भी तत्व खोज कर हम नितार सकें, यह हमारे अमीर विरासत की ही देन है। यह राग प्रबन्ध गुरमत संगीत को भारतीय और विश्व संगीत परम्परा में मौलिक और विलक्षण रूप प्रदान करवाने में सहायक होता है। गुरमत संगीत परम्परा का स्वतन्त्र परम्परा के रूप में निखेड़ा करने के लिए राग प्रबन्ध मूल और विशिष्ट आधार है।

सहायक पुस्तक सूची

1. वार रामकली महला 5 आदि ग्रंथ, पृ. 958
2. ..... वही ....., पृ. 1423
3. बिलावल महला 5 .... वही .... पृ. 821
4. बृहत हिन्दी कोश (संपा. कालिका प्रसाद), पृ.951
5. भरत मुनि नाट्य शास्त्र, अध्याय 28, श्लोक 4166
6. मतंग मुनी, बृहददेशी (संपा. बालकृष्ण गर्ग), श्लोक 279
7. संगीत रत्नाकर (भाग 2), श्लोक 2
8. अहोबल, संगीत पारिजात, श्लोक 91
9. सक्सेना, महेश नारायण, संगीत शास्त्र (भाग दूसरा), पृ. 119
10. आदि ग्रंथ, पृ. 152
11. ..... वही ....., पृ. 580
12. ..... वही ....., पृ. 843
13. ..... वही ....., पृ. 1033
14. ..... वही ....., पृ. 907
15. ..... वही ....., पृ. 1343
16. आदि श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी स्टीक (फरीदकोट वाला टीका) पृ. 126
17. गुरवानी के राग संबोध और सारथक्ता, पृ. 43
18. आदि ग्रंथ, पृ. 1033
19. Gurnam Singh (Dr.) Musicological Study of Guru Nanak Bani, Page 126
20. महला 2, आदि ग्रंथ, पृ. 721
21. बसंत महला 1, ... वही ....., पृ. 1168

22. ..... वही ..... वही
23. ..... वही ..... वही
24. ..... वही ..... वही पृ. 1177
25. मलार महला 1, आदि ग्रंथ, पृ. 1254
26. मलार महला 1, आदि ग्रंथ, पृ. 1273
27. सलोक महला 2, ... वही ..... पृ. 1279
28. सलोक महला 2, ... वही ..... पृ. 1280
29. महला 3, ... वही ....., पृ. 1285
30. महला 3, ... वही ....., पृ. 1283

Pratibha Spandan